International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 28-06-2020; Accepted: 14-07-2020; Published: 29-07-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 4; 2020; Page No. 66-67

प्रेमचन्दकालीन व समकालीन हिन्दी उपन्यास साहित्य में नारी चेतना

घनश्याम प्रसाद
(शोधार्थी) वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार, भारत

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय संस्कृति में नारियों को दैवीय अवतार समझा जाता था। सभी शुभ कार्य नारियों द्वारा ही संचालित किए जाते थे। सामाजिक और आर्थिक क्रियाओं में नारियों का अस्तित्व कायम था। पर बिडंबना यह है कि युग बदलते गए और नारियों की दशा और दिशा लागातार बदलती चली गयी। उनकी अस्मिता एवं अस्तित्व में निरंतर गिरावट आती गयी। शनैः–शनैः वह पुरूषों पर निर्भर होती गयी जिसके कारण वे परिवार के लिए बोझ बनती गयी ।

लेकिन हमें मनुस्मृति का यह आदर्श वाक्य विस्मृत नहीं होना चाहिए।''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता :(मनुस्मृति) जहाँ नारियों का सम्मान होता है वहाँ देवता का निवास होता है।

आज की नारी पारंम्परिक रूढ़ीवादी विचारों को त्यागकर अपने अधिकारों के प्रति संवेदनशील होती दिखाई देती हैं। नारी अब स्वतंत्र सोच के साथ अपना जीवन व्यतीत करना चाहती है। अब वह पुरूषों के जैसे सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक तथा राजनीतिक क्षेत्रो में सामानता का अधिकार चाहती हैं। वह पुरूषों की कठपुतली बनकर जीना नहीं चाहती। नारी अब आत्म चेतना एव आत्म सजगता के साथ–साथ आर्थिक रूप से भी आत्म निर्भर होना चाहती है।

फिर भी कहा जाय की नारी आज भी संक्रमण काल से गुजर रही हैं। तो उसमे कोई अतिशयोंक्ति नहीं होगी। नारियाँ विविध क्षेत्रों में अपना परचम लहरा तो रही हैं लेकिन आज भी वे स्त्रियों के लिए बनी विशेष सामाजिक, नैतिक नियमों के बंधन से पूर्णतः उबर नहीं पायी हैं। आज भी उनका एक ही पाँव घर से बाहर हैं, दुसरा पाँव आज भी रसोई घर के अंदर है।

स्त्री चेतना स्त्री की मुक्ति के साथ–साथ स्त्री की अस्मिता, चेतना व स्वाभिमान की भी रक्षा करती हैं। नारी चेतना नारी को आत्मनिर्णय की शक्ति देती है जिससे आज की नारी रूढ़ीवादी, सामाजिक, नैतिक नियमों को तोड़ने का प्रयास करती नजर आती हैं। यदि कहा जाय कि स्त्री चेतना का संबंध वर्ग, वर्ण, धर्म या लिंग से नहीं बल्कि दृष्टि से हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। सदियों से समाज के हाशिए पर रही स्त्रियाँ अब स्त्री चेतना के फलस्वरूप सशक्त होती नजर आ रही हैं। स्त्रियाँ अब स्वयं रचनाएँ करने लगी हैं, जिससे स्त्री जीवन की वैविध्य पहलू खुलकर सामने आए है जो सदियों से दबी हुई थी। स्त्रियों की अस्मिता एवं अस्तित्व जो सदियों से अमावश्या के घोर अंधेरें में डुबी हुई थी। आज विश्व पटल पर विविध क्षेत्रों में उभर कर सामने आ रही हैं।

नारी को देवी का स्वरूप माना गया है किन्तु यथार्थ से यह काफी दूर है। नारियाँ कहने के लिए तो देवी है लेकिन वास्तविक्ता यह हैं कि आज भी हमारे समाज में नारियों के साथ दोयम् दर्जे का व्यवहार होता नजर आता है।

नारियों के यथार्थ को जानने के लिए हिन्दी साहित्य के गौरव मुंशी प्रेमचन्द के उपन्यासों तथा कुछ समकालीन लेखिकाओं के उपन्यासों को आधार बनाया जा सकता है। प्रेमचन्द के उपन्यासों में स्त्री विमर्श का व्यापक चित्रण हैं। उनके उपन्यासों में स्त्री पात्रों की संख्या बड़ी है तथा स्त्रियों के हर रूप की झलक हैं– शिक्षित–अशिक्षित, शहरी–देहाती, समर्पिता–गर्वीली हैं और माता पत्नी, पुत्री, विध्वा, वेश्या आदि अनेक रूपों में हैं।

प्रेमचन्द के उपन्यासों में स्त्री से जुड़ी अनेक समस्याएँ है साथ–साथ उनका समाधान भी। उनके कुछ नारी पात्र रूढ़ीगत, पारंपरिक विचारों वाली हैं तो कुछ स्त्री पात्र आधुनिक सोच वाली भी। कुछ स्त्री पात्र पुरूष दास्ता का विरोध करती भी दिखती है। लेकिन प्रेमचन्द भारतीय नारियों में ममत्व, प्रेम, दया, सेवा आदि मानवीय मूल्यों को पसंद करते हैं। उन्हे पश्चिमी सभ्यता के नारियों की उच्छृंखलता भारतीय नारियों में देखना पसंद नहीं हैं। प्रेमचन्द ने स्त्रियों की दासता का प्रमुख कारण अशिक्षा को माना, जिसके कारण स्त्रियाँ पुरूषों के हाथों की कठपुतली बनकर जीवन यापन को विवश होती हैं। उनके उपन्यास 'सेवासदन 'में स्त्रियों की शिक्षा के लिए कुशल व्यवस्था देखने को मिलती हैं। भवन में पाँच बड़े कमरे थे। पहले कमरे में लगभग बीस महिलाएँ बैठी हुई कुछ पढ़ रही थी। उनकी अवस्था बारह वर्ष से पन्द्रह वर्ष तक थी। अध्यापिका ने सुभद्रा को देखते ही आकर उससे हाथ मिलाया। सुमन ने दोनो का परिचय कराया। सुभद्रा को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि वह महिला मिस्टर रूस्तम भाई बैरिस्टर की सुयोंग्य पत्नी है। नित्य दो घंटों के लिए आश्रम में आकर इन युवतियों को पढ़ाया करती थी।''[1] (सेवासदन पृष्ट 239)

वेश्यावृत्ति हमारे समाज के लिए अभिशाप है इसका निवारण मानव का नैतिक कर्तव्य है। इस समस्या के समाधान के लिए हमें इसके कारणों की पहचान करनी होगी फिर उसका सामाधान। उपन्यासकार का मानना है कि वह स्त्री जो आर्थिक रूप से कमजोर एवं असम्मानित जीवन जीने को बाध्य की जाती है वही स्त्रियाँ वेश्यावृति को अपनाती है। अगर स्त्रियाँ आर्थिक रूप से स्वावलंबी हो जाय,उसे सम्मानित जीवन प्राप्त हो तो फिर कोई भी स्त्री अपने स्त्रीत्व को बेचना नही चाहेगी। उनके साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार किया जाय, इन्हे प्रेम की दृष्टि से देखा जाय न की धृणा की दृष्टि से। कुँवर अनिरूद्व सिंह के शब्दों में –'' मुझे इस तरमीम से पूरी सहानुभूति है। हमें वैश्याओं को पतित समझने का कोई अधिकार नहीं है, यह हमारी परम धृष्टता है। हम रात–दिन जो रिश्वत लेते है , सुद खाते है , दीनों का रक्त चुसते है, असहायो का गला काटते हैं, कदापि इस योग्य नहीं है कि समाज के किसी अंग को नीच या तुच्छ समझे । सबसे नीच हम है। सबसे पापी, दुराचारी, अन्यायी हम है, जो अपने को शिक्षित , सभ्य उदार और सच्चा समझते है। हमारे शिक्षित भाइयों के ही बदौलत दालमण्डी आबाद है , चौक में चहल–पहल है, चकलो में रौनक है यह मीना बाजार हम लोगों ने ही सजाया है , ये चिड़िया हम लोंगों ने ही फाँसी है। ये कठपुतलियाँ हमने बनाई है।''[2] (सेवासदन पृ0–182)

स्त्री को प्रेम की प्रतिमूर्ति कहा जाता है। उसका सम्पूर्ण जीवन सेवा, त्याग, ममता, करूणा, समर्पण से परिपूर्ण होता है। ''स्त्री पृथ्वी की भॉति धैर्यवान है, शांति समपन्न है, सहिष्णु है। पुरूष में नारी का गुण आ जाते है तो वह महात्मा बन जाता है। नारी मे

पुरूष का गुण आ जाते है तो वह कुलटा हो जाती है"[3] (गोदान पृ0 150) और ''संसार में जो कुछ सुन्दर है उसी की प्रतिमा को मै स्त्री कहता हूँ। ''[4] (गोदान पृ0 151)

दहेज समाज के लिए एक भयावह समस्या है जब तक यह अभिशाप समाप्त न हो जाय, स्त्रियाँ असुरक्षित ही रहेगी। प्रेमचन्द जी इसे बेहद ही बुरा मानते है। ''बुरा रिवाज है बेहद बुरा । बस चले तो दहेज लेने वाले और दहेज देनेवाले दोनो को ही गोली मार दूँ चाहे फाँसी क्यों न हो जाए। पूछो आप लड़के का विवाह करते है या उसे बेचते है? अगर अपको लड़के की शादी मे दिल खोलकर खर्च करने का अरमान है तों शौक से खर्चा कीजिए, लेकिन जो कुछ कीजिए अपने बल पर। यह क्या कि कन्या के पिता का गला रेतिए। नीचता है घोर नीचता है। मेरा बस चले तो उन पाजियों को गोली मार दूँ।''[5] (निर्मला पृ0 26)

स्त्रियों को सबसे बडी पीड़ा कामोत्तेजना के दमन में होती है। उसकी पूर्ति किसी भी मूल्यवान चीजो से नही हो सकती लेकिन नारी जाति की यह विडंबना है कि वह अपने कर्म पथ पर इन सारी इच्छाओं को होम कर देती है। फिर भी उसके उपर उंगली उठाई जाय तो उसका अन्तर्मन यह कहने पर बिल्कुल कारूणिक हो जाता है। ''कर्त्तव्य की वेदी पर अपना जीवन और उसकी सारी कामनाएँ होम कर दी थी। हृदय रोता था पर मुख पर हँसी का रंग भरना पडता था। जिसका मुँह देखने का जी नही चाहता था, उसके सामने हँस हँसकर बाते करनी पड़ती थी। जिस देह का स्पर्श उसे सर्प से शीतल स्पर्श के समान लगता था, उससे आलिंगित होकर उसे जितनी घृणा, जितनी मर्म वेदना होती थी, उसे कौन जान सकता है। उस समय उसकी यही इच्छा होती थी कि धरती फट जाये और उसमें समा जाये''।[6] (निर्मला पृ0 70–71)

नारी के जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य उसका विवाह है। यदि उसकी शादी किसी सुयोग्य पुरूष से हो जाता है तो उसका जीवन सफल हो जाता है, लेकिन अगर बेमेल जोड़ा मिला तो उसका जीवन बिल्कुल कलहपूर्ण हो जाता है। प्रेमचन्द जी का निर्मला उपन्यास इसी बेमेल जोडे से नरक बनी नारी जीवन का यर्थाथ है जो निर्मला को यह कहने के लिए मजबूर करती है। –''दीदीजी अब मुझे किसी वैद्य की दवा फायदा न करेगी। आप मेरी चिंता न करें। बच्ची को आपकी गोद में छोड़े जाती हूँ। अगर जीती जागती रहे तो किसी अच्छे कुल में विवाह कर दीजियेगा। मै तो इसके लिए जीवन में कुछ न कर सकी, केवल जन्म देने भर की अपराधिनी हूँ। चाहे क्वाँरी रखियेगा, चाहे विष देकर मार डालियेगा पर कुपात्र के गले न मढ़ियेगा, इतनी ही आपसे विनय है''।[7] (निर्मला पृ0 158–159)

कृष्णा सोबती, मैत्रेयी पुष्पा, इन्दिरा गोस्वामी इत्यादि कुछ समकालीन स्त्री लेखिकाएँ नारी मन की गांठ खोल देने वाली है। इनके स्त्री पात्र वैविध्य दृष्टिकोण लिए, हर तरह की झलक लिए हुए प्रतीत होती है। इनके स्त्री पात्रों की खासियत यह है कि वे अपनी जिंदगी स्वंय के शर्तो पर जीना चाहती है। वे दुनिया के हर खेल को समझ चुकी है जहाँ ''एक बार का थिरका पाँव जिंदगानी धुल मे मिला देगा।''।[8] (डार से बिछुडी)

मित्रों मरजानी कृष्णा सोबती का एक ऐसा उपन्यास है जिसे पढ़ने के बाद हम उन्हे बिल्कुल भुला नही सकते। उपन्यास का मुख्य पात्र मित्रों है जो समाज की रूढ़ीवादी परमपराओ, नैतिकताओं में हलचल पैदा कर देती है। वह पारिवारिक ताने बाने को तोड़ने का प्रयास करती है। मित्रों की दिनचर्या परिवार की मर्यादाओं के विपरीत है। वह गृहस्थी को लक्षमण रेखा नही मानती। उसका पति सरदारी लाल उसके पिपासा को शांत नही कर पाता, इसलिए मित्रों अपने जेठ बनवारी से ही यह अपेक्षा करने लगती है।'' अनोखी रीत इस देह–तन की, बूँद पड़े तो थोड़ी, न पड़े तो थोड़ी, आज भडवा बनवारी जो बनाव सिंगार देखता।''[9] (मित्रों मरजानी)

सोबती जी के द्वारा इस उपन्यास में दिखाया गया है कि मित्रों अपने देह पर अपने पति सरदारी लाल के एकाधिकार को समाप्त कर देती है। वह अपनी मन मर्जी जीती है। वह जिन्दगी के हर पहलू को अलग–अलग नही देखती बल्कि समग्रता में देखती है। इसलिए सरदारी द्वारा लगाए गये आरोपो को जब मित्रों से पूछा जाता है कि सच है या झुठ। तब उसका स्पष्ट उत्तर आता है '' सज्जनों यह सच भी है और झुठ भी '' जीवन की सबसे बड़ी बिडम्बना है कि झुठ और सच के बीच नाम मात्र का ही अंतर है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास ''चाक'' में 'सारंग' मुख्य नारी पात्र है। सारंग एक शिक्षित संस्कारवान नारी है जिसका विवाह रंजीत से होता है। रंजीत उच्च योग्यताधारी (एम0 एससी0 एजी0 युवा है। ''सारंग'' अपने पति के प्रति पूर्णतः समर्पित है। लेकिन रंजीत सुशिक्षित इंसान होते हुए भी गाँव की खोखली राजनीति में पड़कर कुमार्ग की ओर भटक जाता है और सारंग के प्रति नाकारात्मक सोच रखने लगता है। सारंग का जीवन यहीं से परिवर्तित हो जाता है और उसकी सोच पुरूष सत्ता कें प्रति विद्रोही हो जाता है । सारंग के जीवन में अब एक नया पुरूष उभर कर सामने आता है वह है –श्रीधर । सारंग गाँव के पंचायत चुनाव लड़ती है। सारी नारी शक्ति उसके पीछे खड़ी हो जाती है। सारंग चुनाव जीतकर समाज में अपना एक नया वजूद बना लेती है।

ग्राम्य जीवन की चर्चित लेखिका मैत्रेयी पुष्पा की ग्रामीण स्त्री कहती है ''चल लुच्ची, हम जटनी तो जेब में बिछिया धरे फिरती है , मन आया ताकें पहर लिए ''।[10](चाक पृ0 104)

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि उपरोक्त आलेख में चर्चित स्त्री पात्र अपनी अस्मिता एवं अस्तित्व की रक्षा के लिए अपनी एड़ी चोटी का जोर लगाती प्रतीत होती है। उनका प्रखर स्वर अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न, शोषण एवं पीतृसत्तात्मक समाज के प्रतिमानों के खिलाफ है।

अतः जरूरत है रूढ़ीवादी, पारम्परिक, सामाजिक, नैतिक नियमों के ताने–बाने से नारियों को मुक्त करने की । उन्हे प्रेम, स्नेह, प्रदान करने की । उन्हें साहसी, निर्भिक तथा शिक्षित बनने में पीतृसत्तात्मक समाज के योगदान की। नारियों को केवल साथ देने वाले की कमी है अन्यथा नारियाँ वह कर सकती है जो पुरूष द्वारा शायद सम्भव न हो सके।

कोमल है कमजोर नहीं तू
शक्ति का नाम ही नारी है।
सृष्टि को किरण देने वाली
मौत भी तुझसे हारी है।।।

संदर्भ सूची

1. सेवासदन– मुंशी प्रेमचन्द–पृ0–239
2. वहीं – पृ0–182
3. गोदान – मुंशी प्रेमचन्द–पृ0–150
4. वहीं – पृ0–151
5. निर्मला– मंशी प्रेमचन्द–पृ0–26
6. वहीं – पृ0–70–71
7. वहीं– पृ0– 158–159
8. डार से बिछुड़ी – कृष्णा सोबती
9. मित्रों मरजानी – कृष्णा सोबती
10. चाक – मैत्रेयी पुष्पा– पृ0– 104